छठे के.एस. राजामणी स्मृति व्याख्यान के अवसर पर भारत के राष्ट्रपति, श्री प्रणब मुखर्जी का अभिभाषण

कोच्चि, केरल : 2 मार्च, 2017

प्रख्यात अधिवक्ता और केरल लोकजन जांच आयोग के पूर्व सदस्य, श्री के.एस. राजामोनी के सम्मान में आयोजित छठा स्मृति व्याख्यान देने के लिए केरल आकर प्रसन्नता हुई है।

मैंने अपने सार्वजनिक जीवन के दौरान विभिन्न पदों पर रहते हुए अनेक बार केरल की यात्रा की है। यह विश्व के अलग-अलग भागों के व्यापारियों और धर्म प्रचारकों के लिए भारत में प्रवेश का द्वार रहा है। केरल के लोग अपनी प्रगतिशील विचारशीलता के लिए प्रसिद्ध हैं। साक्षरता, शिक्षा, स्वास्थ्य, लैंगिक समानता, पर्यटन तथा संस्कृति के क्षेत्र में राज्य की प्रभावशाली उपलब्धियों से इसने विश्व भर की प्रशंसा अर्जित की है।

केरल उच्च न्यायालय, इसके न्यायाधीश और अधिवक्ताओं का देश भर में उच्च सम्मान है। न्यायमूर्ति वी.आर. कृष्ण अय्यर जैसी विभूतियों ने निर्धनों और पिछड़ों को न्याय दिलाने में बहुमूल्य योगदान दिया है।

आज के व्याख्यान का विषय भारत @ 70 है। इस 15 अगस्त को, भारत ने अपनी स्वतंत्रता के सत्तर वर्ष पूरे कर लिए हैं। स्वतंत्रता के 50 वर्ष से पहले भारत की आर्थिक विकास दर 0 प्रतिशत से 1 प्रतिशत थी। पचास के दशक में हमारी विकास दर 1-2 प्रतिशत, साठ के दशक में 3-4 प्रतिशत तथा 90 के दशक के आर्थिक सुधारों से 6 से 7 प्रतिशत तक बढ़ गई। पिछले दशक में, हमारी विकास दर औसतन लगभग 8 प्रतिशत रही है जिससे हम विश्व की सबसे तेजी से विकसित हो रही विशाल अर्थव्यवस्था बन गए।

1950 में भारत की जनसंख्या 360 मिलियन थी। आज हम 1.3 बिलियन वाले एक सशक्त राष्ट्र हैं। हमारी वार्षिक प्रति व्यक्ति आय स्वतंत्रताकाल के रु. 7500 से बढ़कर रु. 77000 हो गई है। सकल घरेलू उत्पाद की विकास दर 2.3 से बढ़कर 2015-16 में 7.9 प्रतिशत हो गई है। निर्धनता अनुपात 60 प्रतिशत अधिक से कम होकर 25 प्रतिशत से भी कम हो गया है। औसत जीवन प्रत्याशा 31.4 से बढ़कर 68.4 वर्ष हो गई है। साक्षरता दर 18 से बढ़कर 74 प्रतिशत हो गई है। खाद्यान्न उत्पादन 45 मिलियन टन से बढ़कर 2016-17 में 272 मिलियन टन हो गई है।

भारत की दशा अपनी स्वतंत्रता की शुरुआत में निर्वाह योग्य थी। हमें विदेश से खाद्यान्न आयात पर गुजर-बसर करनी पड़ती थी। आज हम न केवल अपनी आवश्यकता का पर्याप्त खाद्यान्न पैदा करते हैं बल्कि उसे निर्यात भी कर रहे हैं।

1947 में, हमारे कोई प्रसिद्ध उद्योग नहीं थे। इसक विपरीत, आज हम दुनिया के 10वें सबसे बड़े औद्योगिक राष्ट्र हैं। हमारे प्रौद्योगिक आधार और अनुसंधान प्रयोगशालाओं व उच्च शिक्षा संस्थानों के नेटवर्क को विश्व सराहनीय दृष्टि से देखता है। भारत का अंतरिक्ष, सूचना प्रौद्योगिकी, जैव-प्रौद्योगिकी और दवा उद्योग विश्व स्तर का है। मात्र दो सप्ताह पूर्व, इसरो

ने एक साथ 104 उपग्रह प्रक्षेपित करके एक विश्व कीर्मिन स्थापित किया। यह एक ऐसा कारनामा था जिसे अब तक किसी और देश ने करके नहीं दिखाया है। हम न केवल अपने पहले प्रयास में मंगलग्रह पर पहुंच गए बल्कि हमने यह उपलब्धि विश्व के किसी और देश के मुकाबले कम लागत में भी हासिल की।

विगत 70 वर्षों में, हमारे जीवन के प्रत्येक पहलू में स्पष्ट परिवर्तन देखा जा सकता है। भारत सात दशकों की लघु अवधि में एक गरीब अविकसित राष्ट्र से बदलकर प्रति व्यक्ति क्रय शक्ति के मामले में विश्व की तीसरी विशालतम अर्थव्यवस्था बन गया है।

असाधारण चुनौतियों और अपार विविधता के बीच हमारे राष्ट्र की एकता और हमारे लोकतंत्र को मजबूत बनाने में हमारी सफलता भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है। हमने अपने देश में विधि शासन, स्वतंत्रता न्यायपालिका और मुखर मीडिया तथा सिविल समाज को सशक्त तरीके से स्थापित किया है। हमने चुनाव आयोग और कैग जैसी शक्तिशाली संस्थाएं भी निर्मित की जो हमारे राजनीतिक तंत्र के स्तंभ के रूप में स्थापित हैं। विश्व का प्रत्येक ज्ञात पंथ, दैनिक जीवन में प्रयुक्त सौ से अधिक विभिन्न भाषाएं, 1600 बोलियां और विविध संस्कृतियां एक ध्वज और एक संविधान के अंतर्गत हैं। लगभग 553 मिलियन लोगों ने 2014 के आम चुनावों में मतदान किया, जो आकार और विस्तार में इतना बड़ा आयोजन था जिसकी बराबरी दुनिया में कोई नहीं कर सकता।

देवियो और सज्जनो,

हमारे संस्थापकों ने हमें जो सबसे महत्त्वपूर्ण विरासत सौंपी है, वह संविधान है।

संविधान एक राष्ट्र के शासन का एक घोषणा पत्र है। सुशासन क्या है, इस विचार को समय की आवश्यकता द्वारा परिभाषित तथा दशकों के अनुभव द्वारा समृद्ध किया जाना चाहिए। तथापि संविधान में कुछ ऐसे कालजयी मूल्य निहित हैं जिन पर कदापि समझौता नहीं किया जा सकता। हमें इन मूल्यों की कसौटी के साथ अपने कार्य निष्पादन को निरंतर नापते रहना चाहिए।

उद्देशिका में सभी नागरिकों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय तथा स्वतंत्रता, समानता तथा भ्रातृत्व प्रदान करने का भारत की जनता का संकल्प समाहित है। हममें पंथनिरपेक्षता का सिद्धांत भी स्थापित है।

किसी राष्ट्र के जीवन में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय एक गंतव्य से कहीं अधिक एक यात्रा है। सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए न केवल शासन बल्कि मानसिकता के पुनर्सृजन तथा सामाजिक परंपराओं के कायाकल्प की आवश्यकता है। यह केवल विधानपालिका, कार्यपालिका अथवा न्यायालय का ही नहीं वरन् इनमें से प्रत्येक का कार्य है।

किसी भी लोकतंत्र का परम लक्ष्य उसकी आर्थिक, धार्मिक या सामाजिक स्थिति का ध्यान किए बिना व्यक्ति का सशक्तीकरण है। यह बहुत से लोगों के लिए काल्पनिक सपना हो परंतु एक तंत्र की मजबूती इसकी प्राप्ति के लिए अनवरत कार्य करने की क्षमता में निहित है। राजनीतिक न्याय के लक्ष्य के लिए हमारे समाज के पिछड़े वर्गों का निरंतर सशक्तीकरण आवश्यकता है। हमें

एक ऐसे तंत्र का निर्माण करना चाहिए जिसमें राजनीति तक पहुंच कुछ धनाढ्यों तक सीमित न रहे बल्कि एक औसत भारतीय भी योगदान करने में अत्यंत सबल अनुभव करे।

आर्थिक विकास सुशासन के लिए अत्यावश्यक हे। हमारे पास धन नहीं होगा तो हम बांट नहीं सकते। इसलिए, धन का सृजन राज्य की नीति का एक सबसे प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए। तथापि इसके साथ समानता का सिद्धांत जुड़ा होना चाहिए जिसके बारे में कोई समझौता नहीं किया जा सकता।

एक समतामूलक समाज तभी निर्मित किया जा सकता है जब विकास समावेशी हो। यह सुनिश्चित करना जरूरी है कि न्याय और अवसरों की समानता हो तथा राज्य ऐसी कोई हालात पैदा न करे जिसमें कुछ धनी लोग घोर गरीबी में रह रहे विशाल वर्ग की कीमत पर लाभ उठा रहे हों। एक सतत समाज समता और न्याय के सिद्धांतों पर आधारित हो सकता है। भारतीय संविधान को समाजिक आर्थिक परिवर्तन का घोषणा पत्र के रूप में सही वर्णित किया गया है।

भारत जब स्वतंत्र हुआ तो विश्व के बहुत से लोगों ने सोचा कि हमारा लोकतांत्रिक प्रयोग कभी सफल नहीं हो पाएगा। हमारी विविधता, गरीबी और हमारी जनता की निरक्षरता को देखकर भविष्यवाणी की कि भारत सत्तावादी शासन अथवा सैन्य तानाशाही में बदल जाएगा। परंतु भारत की जनता ने प्रलय के इन भविष्यवक्ताओं को गलत सिद्ध कर दिया।

फिर भी, हमें इस सच्चाई के प्रति जागरूक रहना चाहिए कि हमारे लोकतंत्र को निरंतर पोषित करने की जरूरत है। हमें किसी भी मूल्य पर त्रुटियों से लाभ नहीं उठाने देना चाहिए। जो हिंसा फैलाते हैं, उन्हें याद रखना चाहिए कि इतिहास में हिटलर या चंगेज खां नहीं बल्कि बुद्ध, अशोक और अकबर को नायकों के रूप में याद किया जाता है।

देवियो और सज्जनो,

यदि महिलाओं के प्रति इसके नागरिकों का व्यवहार असभ्यपूर्ण होगा तो मैं किसी भी समाज या राष्ट्र को सभ्य नहीं कहूंगा। जब हम नारी से दुर्व्यवहार करते हैं, तो अपनी सभ्यता की आत्मा का आहत करते हैं। न केवल हमारे संविधान ने महिलाओं को समान अधिकारों की गारंटी दी है बल्कि हमारी संस्कृति और परंपरा भी नारी को देवी मानती हैं। हमारी महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा और हिफाजत एक राष्ट्रव्यापी प्राथमिकता होनी चाहिए। किसी भी समाज की अग्नि परीक्षा महिलाओं और बच्चों के प्रति इसका रवैया है। भारत को इस परीक्षा में असफल नहीं होना चाहिए।

देवियो और सज्जनो,

भारत में असहिष्णु भारतीय के लिए कोई स्थान नहीं है। भारत प्राचीन काल से ही मुक्त विचारों, संभाषण और अभिव्यक्ति का स्थान रहा है। हमारे समाज को सदैव विविध विचारधाराओं और वादविवाद तथा परिचर्चा के खुले द्वन्द्व द्वारा निरुपित किया जाता है। भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, हमारे संविधान द्वारा गारंटी प्रदत्त एक सबसे महत्त्वपूर्ण मौलिक अधिकार है। उपयुक्त आलोचना और असहमति के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए।

मित्रो,

भारत उस समय शिक्षा के क्षेत्र में विश्व अग्रणी था जब नालंदा और तक्षशिला जैसे हमारे विश्वविद्यालय अपनी महानता के शिखर पर थे। नालंदा और तक्षशिला मात्र भौगोलिक अभिव्यक्तियां ही नहीं बल्कि उन्मुक्त विचारों का प्रतीक भी थी जो अतीत के इन महान विश्वविद्यालयों में फले-फूले। हमारे प्रतिष्ठित उच्च शिक्षा संस्थान ऐसे यान हैं जिनके द्वारा भारत को एक ज्ञानपूर्ण समाज में प्रवेश करना चाहिए। शिक्षा के इन मंदिरों में सर्जनात्मकता और उन्मुक्त विचारशीलता की अनुगूंज होनी चाहिए। विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को असंतोष की संस्कृति के प्रचार-प्रसार की बजाय तर्कपूर्ण परिचर्चा और वाद-विवाद में शामिल होना चाहिए। उन्हें हिंसा और कोलाहल के चक्र में फंसते हुए देखना दुखद है।

देवियो और सज्जनो,

हमारे प्रथम प्रधान मंत्री, जवाहरलाल नेहरू मानते थे कि लोकतंत्र मतदान, चुनाव या सरकार के राजनीतिक रूप से कहीं अधिक गहरा है। उन्होंने कहा, ''अंतिम विश्लेषण में, यह विचारशीलता का ढंग, कार्य करने का ढंग, अपने पड़ोसी और अपने प्रतिद्वन्द्वी और विरोधी के प्रति व्यवहार है।''

हमारे नेताओं और राजनीतिक कार्यकर्ताओं को जनता की बात सुननी चाहिए, उनसे जुड़ना चाहिए, उनसे सीखना चाहिए तथा उनकी आवश्यकताओं और चिंताओं के प्रति संवेदनशील होना चाहिए। हमारे विधान निर्माताओं को जनता को हल्के में नहीं लेना चाहिए। उन्हें विधान निर्माण तथा जनता से जुड़े मुद्दों को उठाने और उनकी समस्याओं के समाधान ढूंढने के प्रमुख कार्य पर ध्यान देना चाहिए।

एक सांसद का प्रथम और सर्वप्रमुख दायित्व विधान निर्माता करना है। यह सबसे दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारी संसद विधान निर्माण के लिए प्रदत्त समय में धीरे-धीरे ये कमी आ रही है। उदाहरण के लिए 1952-57 की प्रथम लोक सभा में 677 बैठक हुईं जिसमें 319 बिल पारित किए गए। तुलनात्मक रूप से 2004-2009 की चौदहवीं लोक सभा में 332 बैठक हुईं और केवल 247 बिल पारित हुए। पंद्रहवीं लोक सभा में 357 बैठक हुईं और 181 बिन पारित हुए जबकि सोलहवीं लोकसभा में 197 बैठक हुईं और मात्र (10वें सत्र तक) 111 बिल पारित हुए।

दसवीं लोक सभा (1991-96) से बाद के अवरोध/स्थगन के कारण खराब हुए समय के आंकड़े उपलब्ध हैं। दसवीं लोक सभा में 9.95 प्रतिशत, ग्यारहवीं लोक सभा में 5.28 प्रतिशत, बारहवीं लोक सभा में 11.93 प्रतिशत, तेरहवीं लोक सभा में 18.95 प्रतिशत, चौदहवीं लोक सभा में 19.58 प्रतिशत, पंद्रहवीं लोक सभा में 41.6 प्रतिशत और 16वीं लोक सभा में 16 प्रतिशत (10वें सत्र तक) समय नष्ट हुआ।

देवियो और सज्जनो, किसी भी निर्वाचित पद पर आसीन व्यक्ति को उस पद पर काबिज रहने के लिए आमंत्रित नहीं किया गया है। प्रत्येक मतदाता तक पहुँचा है और उनका मत और समर्थन मांगा है। राजनीतिक तंत्र और निर्वाचित व्यक्ति में जनता द्वारा व्यक्त विश्वास को धोखा नहीं देना चाहिए।

हमारे विधायकों और संसद को लड़ाई का अखाड़ा नहीं बनाना चाहिए। सदन का परीक्षण बाहुबल का परीक्षण नहीं है। जनता का प्रतिनिधित्व करने का अवसर अधिकार या हक नहीं बल्कि एक नैतिक दायित्व और कर्त्तव्य है। हमारे निर्वाचित प्रतिनिधि अनुकरणीय आचरण के आदर्श के रूप में कार्य करने के लिए हमारे देश की जनता के ऋणी हैं।

भारत की संसद और हमारी विधान सभाएं आधार स्तंभ हैं जिन पर हमारे लोकतंत्र का ढांचा टिका हुआ है। वे सर्वोच्च संस्थाएं हैं जिनमें हमारी जनता द्वारा सीधे निर्वाचित सदस्य शामिल हैं। इनके जरिए जनता द्वारा सरकार को जवाबदेह ठहराया जाता है। यदि वे गलत कार्य करेंगे तो इसके परिणामस्वरूप न केवल वे संस्थाएं निष्क्रिय हो जाएंगी बल्कि पूरी व्यवस्था पर भी बुरा प्रभाव पड़ेगा। जो बहस और परिचर्चाएं संसद के सदन और विधान सभाओं में खुलकर होनी चाहिए वह कहीं और नहीं हो सकती। जब वे प्रभावी रूप से कार्य करना बंद कर देती हैं तो मुद्दे सड़कों पर उतर आते हैं। हमारे लोकतंत्र की पूरी नींव हिल जाती है।

मैं डॉ. बी.आर. अम्बेडकर द्वारा 25 नवम्बर, 1949 को संविधान सभा में दिए गए सुप्रसिद्ध भाषण के कुछ अंश पढ़ना चाहता हूं। उन्होंने कहा था :

''....यद्यपि एक संविधान श्रेष्ठ हो सकता है, लेकिन यह बुरा हो सकता है क्योंकि जिन्हें इस पर कार्य करने के लिए लगाया जाता है, वे अत्यधिक बुरे हो सकते हैं। तथापि चाहे कोई संविधान कितना ही बुरा हो, वह अच्छा हो सकता है, यदि उस पर कार्य करने वाले अच्छे हों। संविधान का कामकाज पूर्णत: संविधान के स्वरूप पर निर्भर नहीं करता है। संविधान केवल विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका जैसे राष्ट्र के अंग ही मुहैया करवा सकता है। जिन तत्त्वों पर राष्ट्र के अंगों का कामकाज निर्भर है, वे जनता हैं और राजनीतिक दल हैं जो उनकी आकांक्षाओं और उनकी राजनीति को पूरा करने के उन्हें साधन के तौर पर स्थापित करेंगे।''

''क्या भारतीय देश को अपने पंथ से ऊपर स्थान देंगे अथवा पंथ को देश से ऊपर स्थान देंगे? मैं नहीं जानता। परंतु ज्यादातर यह निश्चित है कि यदि दल पंथ को देश से ऊपर रखेंगे तो हमारी स्वतंत्रता दूसरी बार खतरे में पड़ जाएगी और संभवत: सदा के लिए समाप्त हो जाएगी। इस संभावित परिणाम से हम सभी को बचना होगा।''

''....यदि हमें लोकतंत्र को उसके ढांचे के रूप में ही नहीं बल्कि वास्तविकता में बनाए रखना चाहते हैं, तो हमें क्या करना चाहिए? मेरी समझ में जो पहली बात आती है, वह है हमारे सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के संवैधानिक तरीकों को मजबूती से कायम रखना। इसका अर्थ है कि हमें क्रांति के रक्तरंजित तरीकों का परित्याग करना होगा। .....परंतु जहां संवैधानिक तरीके खुले हैं, वहां इन तरीकों का कोई औचित्य नहीं है। ये तरीके कुछ नहीं बल्कि अराजकता की व्याकरण हैं और जितना शीघ्र उनका परित्याग कर दिया जाएगा, हमारे लिए बेहतर है।''

मुझे संयुक्त राज्य के एक संस्थापक बेंजामिन फ्रेंकलीन की एक प्रसिद्ध किस्सा याद आता है। 1787 के संविधान समझौते की परिचर्चाओं के सम्पन्न होने के बाद, फिलाडेल्फिया की एक

महिला सुश्री पोमेल ने उनसे पूछा, ''*डॉक्टर, हमें क्या हासिल हुआ, गणतंत्र या राजतंत्र?*'' बिना किसी हिचक के बेंजामिन ने उत्तर दिया, ''*एक गणतंत्र यदि आप इसे बनाए रख सके।*''

राष्ट्रीय उद्देश्य और देश प्रेम की भावना को पुन: खोजने के सामूहिक प्रयासों का समय आ गया है जिनसे हमारा राष्ट्र सतत् प्रगति और समृद्धि के पथ पर अग्रसर हो सकता है। राष्ट्र और जनता सदैव पहले होनी चाहिए। आइए, अपने समाज के नैतिक पतन को रोकने का प्रयास करें और यह सुनिश्चित करें कि हमारे मूल सभ्यतागत मूल्यों की जड़ें और गहरी हो जाएं। आइए, भारत के बहुलवाद और विविधता को मजबूत बनाने के लिए स्वयं को झोंक दें। आइए, हिंसा, संकीर्णता और घृणा को उखाड़ फेंकने का संकल्प लें।

आइए, तीव्र प्रगति का प्रयास करें परंतु ऐसा करते हुए यह सुनिश्चित करें कि आर्थिक प्रगति के लाभ हमारे देश के गरीब से गरीब और सुदूर कोनों में रह रहे लोगों तक पहुंचे। आइए, हमारे देश के गरीब से गरीब को उदीयमान भारत की गाथा का हिस्सा बनाएं। आइए, शिक्षा, कौशल विकास और नवान्वेषण को अपनाएं जिससे हम भारत को भविष्य की ओर अग्रसर कर सकें तथा 21वीं सदी की प्रौद्योगिक लहर पर सवार होकर एक ज्ञानपूर्ण अर्थव्यवस्था का निर्माण करें।

मैं भारत का अत्यंत उज्ज्वल भविष्य को देख रहा हूँ। हमारे संवैधानिक मूल्य, युवा जनसंख्या और उद्यमितापूर्ण योग्यताएं तथा परिश्रम की क्षमता हमें द्रुत प्रगति तथा एक संवेदनशील और सहृदय समाज के निर्माण के आवश्यक मूल तत्त्व प्रदान करते हैं। भारत का विगत 70 वर्षों में कायाकल्प हो गया है। मुझे विश्वास है कि अगले दस वर्षों में, हम अपने मुक्त, लोकतांत्रिक और समावेशी समाज को और मजबूत बनाने पर केंद्रित अपने राष्ट्र को आगे बढ़ाने के दौरान हम और महान उन्नति करेंगे।

धन्यवाद,

जय हिंद।